[२०२०] ४ एस.सी.आर. १११२

राजा उर्फ अयप्पन

बनाम

तामिलनाडु राज्य

(आपराधिक अपील संख्या-1120-2010)

अप्रैल 01, 2020

(एस0 अब्दुल नजीर और दीपक गुप्ता, जे0 जे0)

आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम, 1987 धारा 15 स्वीकारोक्ति के आधार पर अपीलार्थी की दोषसिद्धि

अपीलार्थी का दलील है कि तत्कालिक मामले में कथित स्वीकारोक्ति दर्ज करते समय अधिनियम तथा नियमावली द्वारा पदत्त प्रावधानों का अनुपालन न किये जाने के कारण स्वीकारोक्ति स्वैच्छिक नही है तथा यह साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य नही है।

निर्णीत-इस मामले में स्वीकारोक्ति पुलिस अधीक्षक द्वारा दर्ज किया गया साक्षी-28 पी0 डब्लू के साक्ष्य से यह स्पष्ट नही होता है कि अधिनियम की धारा 15 द्वारा तथा ताडा नियमावली के नियम 15(3) के अन्तर्गत अपीलार्थी अभियुक्त को चेतावनी दी गई थी। इन नियमों का अनुपालन महज औपचारिक्ता या तकनीक नही बल्कि भारत के संविधान में अनुच्छेद 21 के अन्तर्गत प्रदत्त निष्पक्ष सुनवाई सुनिश्चत करने हेतु वैधानिक उद्देश्य की पूर्ति करता है। अभिलेख की संपूर्ण कार्यवाहियों से अभियुक्त द्वारा किये गये प्रश्नोत्तर समेत आसपास की विभिन्न रिस्थियों पर विवेक का अनुप्रयोग प्रतिविंबित होना चाहिए। प्रमाणपत्र दिये जाने से बयान की स्वैच्छिकता साबित नही होती है बल्कि यह नियम का एकमात्र तकनीकी अनुपालन है। पी0 डब्ल्यु0-28 द्वारा किये गये प्रश्न तथा अपीलार्थी द्वारा दिये गये उत्तर तथा बयान देने के तरीका इस बात को जानने का आधार है कि बयान स्वेच्छा से दिया गया या नही। अभियोजन साक्षी संख्या-28 ने केवल यह बताया है कि उसे बयान दर्ज करने हेतू प्रस्तुत किया गया है। उसने यह नही बताया कि उसका स्वीकारोक्ति दर्ज करने हेतु उसे प्रस्तुत किया गया है। इस प्रकार बयान की स्वैच्छिकता को दर्शाने वाला कुछ भी अभिलेख पर मौजूद नही है। अपीलार्थी का स्वीकारोक्ति ब्यान को अस्वीकृत किया गया।- दण्ड प्रक्रिया संहिता 1973, धारा 164- भारत का संविधान- अनुच्छेद-21- आतंकवादी तथा विघटनकारी गतिविधियाँ नियमावली-नियम 15(3)

आतंकवादी तथा निघटनकारी गतिविधियाँ ;रोकथामद्ध अधिनियम 1987-धारा-15-प्रथम मामले में सह-अभियुक्त का स्वीकारोक्ति बयान-ग्राह्यता-अपीलार्थी के मामले में निर्णित अग्राह्य- धारा-15 प्रावधान करती है कि सह-अभियुक्त का दोष स्वीकारोक्ति बयान एक साथ विचारण किये गये मामले में अन्य अभियुक्त के विरूद्ध ग्राह्य है, परंतु वाद यदि किसी कारणवश संयुक्त विचारण न हो तो बाद में विचारण का सामना कर रहे उसी मामले में अन्य अभियुक्त के विरूद्ध साक्ष्य के रूप में ग्राह्य नही है। चूँकि अन्य दोनों अभियुक्तों का विचारण पृथक किया गया, अतः उनका स्वीकारोक्ति बयान साक्ष्य में ग्राह्य नही है तथा अपीलार्थी के विरूद्ध साक्ष्य में नही लिया जा सकता है। नामित न्यायालय द्वारा अपीलार्थी का दोष सिद्धी न्यायोचित नही है।

अपील स्वीकृत करते हुए न्यायालय का निर्णयः

1.1 विधि द्वारा स्थापित किया गया है कि स्वैच्छिकता को लेकर संदेह से मुक्त न होने पर स्वीकोरोक्ति बयान साक्ष्य के रूप में ग्राह्य नही है। प्रलोभन, भय तथा वादा द्वारा प्राप्त स्वीकारोक्ति स्वैच्छिक स्वीकारोक्ति नही है। स्वीकारोक्ति स्वैच्छिक है या नही यह एक तथ्य का प्रश्न है।

1.2 टाडा अधिनियम की धारा 15 (1) इस अधिनियम के तहत आरोपित अभियुक्त के स्वीकारोक्ति ब्यान दर्ज करने के संदर्भ में एक स्व-निहित योजना है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 25 से 30 तक के प्रावधानों से यह प्रावधान भिन्न है। ताडा अधिनियम की धारा 15 साक्ष्य अधिनियम तथा दण्ड प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों से स्वतंत्र रूप से प्रभावी है। करतार सिंह के मामले में संविधान पी0 ने उपरोक्त प्रावधान की वैधता को बरकरार रखते हुए स्वीकारोक्ति के दर्ज करने से संबंधित कुछ स्पष्ट दिशा निर्देश दिया है। ये दिशा निर्देश यह सुनिश्चित करने के लिए जारी किये गये थे कि पुलिस अधीक्षक से कम रैंक के पुलिस अधिकारी द्वारा अभियोजनपूर्व पूछताक्ष में प्राप्त स्वीकारोक्ति किसी भी स्थिति में दूषित नही, बल्कि ठोस मान्यता और स्वीकृत सिद्धान्तों और मौलिक निष्पक्षता के अनुरूप हो।

2.1 अपीलार्थी (बचाव साक्षी-1) ने अपने साक्ष्य में कहा है कि वह 19.5.07 को गिरफ्तार हुआ और पुलिस द्वारा उसे प्रताड़ना दी गई। दिनांक 22.5.2007 को वह न्यायिक दण्डाधिकारी के समक्ष प्रस्तुत किया गया तथा 25.07.2007 तक के लिए न्यायालय द्वारा रिमाण्ड पर किया गया। पी0डब्ल्यु0-27 ने पाँच दिनों के लिए अभियुक्त की पुलिस कस्टडी की मांग की तथा 25.07.2007 से 27.07.2007 तक की पुलिस कस्टडी दी गई। 25.07.2007 को जब अपीलार्थी पुलिस गाड़ी में बैठाया तो इंस्पेक्टर ने उसे कहा कि कुछ कागजातो पर उसे

हस्ताक्षर करना होगा अन्यथा पुलिस कस्टडी में उसे मार दिया जाएगा। जब उसे. नामित न्यायालय के समक्ष लाया गया तो उसने एक आवेदन दिया कि पुलिस ने उसे प्रताड़ना दी है तथा उसका घटना से कोई लेना देना नही है। जब वह पुनः नामित न्यायाधीश के समक्ष स्वीकारोक्ति ब्यान दर्ज होने के बाद प्रस्तुत किया गया तो उसने पुनः दूसरा आवेदन दिया कि उसने पी0 डब्ल्यु0-28 के समक्ष कोई भी दोषपूर्ण बयान नही दिया है।

2.2 26.07.2007 को अभियोजन साक्षी-29 ने अपीलार्थी को अ0सा0-28, पुलिस अधीक्षक के समक्ष प्रस्तुत किया। पी0 डब्ल्यु0-28 ने अपने प्रतिपरीक्षण के दौरान यह कहा है कि जबतक 26.07.2007 को अभियुक्त प्रस्तुत नही किया गया, वह पुलिस हिरासत में था। 26.01.2007 को यद्यपि यह दर्ज किया गया है कि अभियुक्त से कई प्रश्न पुछे गए और उसके उत्तर प्राप्त किये गये परन्तु अभिलेख पर यह दिखाने के लिए कुछ नही है कि टाडा अधिनियम की धारा 15 द्वारा टाडा अधिनियमों के नियम 15(3) के तहत उसे चेतावनी दी गई। पी0 डब्ल्यु0-28 का साक्ष्य है कि उसने अभियुक्त को वही चेतावनी दी, जो उसे 26.07.2007 को दिया था। यह दिखाने के लिए कोई समकालीन रिकार्ड नही है कि चेतावनी 26..07.2007 या 27.07.2007 को दी गई थी। दूसरा प्रश्न प्रदर्श-पी-57 के अनुसार पूछा गया जो बहुत महत्व रखता है। इस प्रश्न में पी0 डब्ल्यु0-28 ने अभियुक्त को समझाया है कि उसे ब्यान दर्ज कराने हेतु लाया गया है। उसने यह नही बताया है कि उसे स्वीकारोक्ति ब्यान दर्ज कराने हेतू लाया गया है। नियमो का अनुपालन केवल कोटी औपचारिकता था तकनीक नही है बल्कि ये प्रावधान संविधान में अनुच्छेद-21 द्वारा प्रदत्त निष्पक्ष विचारण को सुनिश्चित करने हेतू वैधानिक उद्देश्य को पूर्ति करता है। विधि में नियमों का तकनीकी अनुपालन नही बल्कि स्वीकारोक्ति के स्वैच्छिकता का वास्तविक संतुष्टि अनिवार्य है।

3.1 पुलिस पदाधिकारी के समक्ष दर्ज स्वीकारोक्ति बयान को न्यायिक दण्डाधिकारी के समक्ष दर्ज धारा 164 द0प्र0सं0 के तहत दर्ज बयान के समतुल्य माना जाता है। इसलिए कथित दोषी स्वीकृति बयान एक ठोस साक्ष्य है। मजिस्ट्रेट के द्वारा ली गयी सावधानियों का अनुसरण पुलिस पदाधिकारी के द्वारा किया जाना चाहिए। विधि द्वारा स्थापित है मजिस्ट्रेट द्वारा संतुष्ट होने के संदर्भ में संदेह होने पर समूचे स्वीकारोक्ति ब्यान को अस्वीकृत किया जा सकता है।

3.2 इस मामले में यह स्पष्ट है कि पी0 डब्ल्यु0-28 द्वारा पूछे गये प्रश्न तथा अभियुक्त द्वारा दिये गये उत्तर तथा बयान देने का तरीका इस वाद का आधार है जिससे पता लगाया जा सके कि बयान स्वेच्छा से दिया गया या नही। यदि प्रमाणपत्र उपर्युक्त किसी भी इनपूट द्वारा समर्थित नही है तो प्रमाणपत्र अस्वीकृत करने योग्य है। पुलिस पदाधिकारी अपनी कल्पना के आधार पर यह प्रमाणपत्र नही दे सकता बल्कि पूरी कार्रवाई में यह प्रतिबिम्बित होना चाहिए कि प्रमाणपत्र सही तरीके से तथ्यों के आधार दिया गया। इस मामले में बयान की स्वैच्छिकता

साबित करने के लिए अभिलेख पर कुछ भी उपलब्ध नही है। प्रदर्श-डी0-1 तथा डी0-2 और अन्य परिस्थितियों से पता चलता है कि अपीलार्थी स्वेच्छा से यह बयान नही दे सकता था। इसलिए अपीलार्थी का स्वीकारोक्ति अस्वीकार्य है।

4.1 विचारणार्थ द्वितीय प्रश्न यह है कि दोनों अन्य अभियुक्तों का स्वीकारोक्ति बयान साक्ष्य में ग्राह्य है या नही। भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 30 यह प्रावधान करती है कि सह अभियुक्त का स्वीकारोक्ति को ग्राह्य बनाने के लिए संयुक्त विचारण होना अवश्यक है। यदि संयुक्त विचारण नही है तो सह अभियुक्त का स्वीकारोक्ती बयान साक्ष्य में ग्राह्य नही है और इसी कारणवश इसे अन्य सह अभियुक्त के विरूद्ध बतौर साक्ष्य प्रयोग नही किया जा सकता है। करतार सिंह के मामले में इस न्यायालय के संविधान पीठ ने भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 30 तथा टाडा अधिनियम की धारा 15 के अन्तरप्रयोग पर विचारण करते हुए य दिया कि 1993 के संशोधन के बाद, सह अभियुक्त का स्वीकारोक्ति बयान भी ठोस साक्ष्य है बशर्ते संयुक्त विचारण हो।

करतार सिंह बनाम पंजाब राज्य (१९९४) ३ एस.सी.सी. ५६९ : [१९९४] २ एस.सी.आर. ३७५- को अनुसरण किया गया।

राज्य बनाम नलीनी और अन्य (१९९९) ५ एस.सी.सी. २५३ : [१९९९] ३ एस.सी.आर. १)

जमील अहमद बनाम राजस्थान राज्य (२००३) ९ एस.सी.सी. ६७३ – अनउपयुक्त घोषित।

४.२ इस मामले में निःसंदेह अपीलार्थी फरार था जिस कारण अन्य अभियुक्तगण के साथ उसका संयुक्त विचारण नही किया जा सका। टाडा अधिनियम १५ विशिष्ट प्रावधान करती है कि दर्ज स्वीकारोक्ति सह अभियुक्त के विचारण में ग्राह्य है यदि उस अभियुक्त के साथ उसने अपराध कारित किया तथा विचारण का सामना कर रहा है, जिसकी वह स्वीकारोक्ति बयान है। यदि किसी कारणवश संयुक्त विचारण नही किया गया तो उस अभियुक्त के विरूद्ध बतौर साक्ष्य इस्तेमाल नही किया जा सकता यद्यपि विचारण उसी मामले में बाद में किया गया है। चूँकि अन्य दो अभियुक्तों का विचारण पृथक किया गया, उनका स्वीकारोक्ति बयान साक्ष्य में ग्राह्य लायक नही है तथा अपीलार्थी के विरूद्ध इसे साक्ष्य के रूप में प्रयोग नही किया जा सकता है। नामित न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को दोषी ठहराया जाना न्यायोचित नही है।

अनंता दीक्षित बनाम राज्य १९८४ सी०आर०एल० एल०जे० ११२६ अनुमोदित

अपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: अपराधिक अपील संख्या-११२०/२०१०

नामित न्यायालय संख्या-२ (अपर सत्र न्यायालय-पंचम, चेन्नई-१०४) के पीठासीन

पदाधिकारी द्वारा कैलेण्डर केश नं0-१/२००७ में दिनांक ०४.०१.२००९ को पारित निर्णय तथा आदेश से । एस0 नागामुथ्थु, वरीय अधिवक्ता, वाई0ए0 रूनागीरी, एम0पी0 पार्थिबन, ए0एस0 वैरावन, हार्दिक गौतम, राकेश कुमार शर्मा

..... अपीलार्थी की ओर से

जयंत मुथराज, वरीय अधिवक्ता रॉय अब्राहम, पी0वी0 दिनेश, एम0 योगेश कन्ना,.....उत्तरदायी की ओर से

एस0अब्दुल नजीर न्यायमूर्ति द्वारा पारित निर्णय

1. आतंकवादी तथा विघटनकारी गतिविधियॉं (रोकथाम) अधिनियम-1987 (संक्षेप में टाडा एक्ट) के धारा-19 के तहत यह अपराधिक अपील पीठासीन पदाधिकारी नामित न्यायालय संख्या 2, चेन्नई द्वारा कैलेन्डर वाद संख्या 01/2007 में दिनांक 04.12.2009 को पारित निर्णय तथा आदेश के विरूद्ध लाया गया है, जिसमें नामित न्यायालय ने अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया तथा 120.बी0 के भा0द0वि0 के तहत दो वर्ष का सश्रम कारावास 120 भा0द0वि0 तथा विस्फोटक पदार्थ अधिनियम के धारा 5 तथा के 120 बी0 भा0द0वि0 के तहत 5 वर्ष का सश्रम कारावास तथा टाडा एक्ट की धारा 3 (3) तथा 4(1) सहपठित-120बी0 भा0द0वि0 के तहत तथा विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा-5 सहपठित 120बी0 भा0द0वि0 के तहत 05-05 वर्ष के सश्रम कारावास की सजा दी गयी तथा सभी साजाए साथ चलने का आदेश दिया गया है।

2. अभियोजन मामला संक्षेप में यह है कि जून 1988 के दौरान इलानगो कुमारन उर्फ रवि उर्फ संतोष और सुकु उर्फ सुकुमारन उर्फ कुमार त्रिचि में तमिलनाडु को स्वतंत्र राज्य का दर्जा दिलाने तथा विधि द्वारा स्थापित सरकार का बहिष्कार करने के उद्देश्य से केन्द्र तथा राज्य सरकार के भवनों को विस्फोट करन हेतू 'तमिलियर पसारई' नामक एक संगठन बनाया। अपीलार्थी तथा 13 अन्य अभियुक्तगण में उस संगठन ने अपना नाम दर्ज कराया तथा जून 1988 के दौरान सचिवालय में राज्य सरकारी भवन'नमक्कल कविनगर मलिंगई' में विस्फोट करने का षड्यंत्र रचा तथा उक्त षड्यंत्र को कार्यरूप देने हेतू सुकु, सनमुगा सुन्दरम् ने तमिलनाडु एडवान्सड टेक्नीकल इन्स्टीट्च्यूट त्रिचि में इलेक्ट्रॉनिक्स का कोर्स किया तथा उनलोगो द्वारा निर्मित टाइमर में इस्तेमाल करने हेतू इलेक्ट्रॉनिक टाइमर के तंत्र को सीखा।

3. आगे अभियोजन मामला यह है कि सितम्बर 1990 के दौरान सुकुने इलेक्ट्रॉनिक प्रिन्टेड

सर्किट बोर्ड, इन्टीग्रेटेड सॉकिट स्वीच, रेसिस्टर लाया तथा सनमुगा सुन्दरम् को टाईम बम में संलग्न करने हेतु इलेक्ट्रॉनिक टाइमर डिवाइस तैयार करने का निर्देश दिया। अपीलार्थी तथा दो अन्य अभियुक्तों ने तमिलर परसाई जिन्दाबाद का नारा कागज पर लिखकर (प्रदर्श-एम.ओ.7) दिनांक 22.09.1990 को टाईम बम के पास रख दिया। बम अन्य अभियुक्त सुकु द्वारा 22.9.1990 को नमक्कल कविनगर मालिगई के समीप विस्फोटक पदार्थ तथा टाइमर डिवाइस युक्त एक जरकिन में (वस्तु प्रदर्श-1) ब्लास्ट कराया जाना था। सशस्त्र रिजर्व पुलिस के हेड कान्सटेबल, जी0 एम 0 राजेन्द्रन द्वारा 06:45 बजे सुबह ब्लास्ट होने से पूर्व उसे देखा गया और बम को उसके बाद निष्क्रिय कर दिया गया। उसके बाद फोर्ट पुलिस स्टेशन के इन्चार्ज सहायक कमिश्नर को पी0 डब्ल्यु0-1 द्वारा सूचना दी गई जिसके बाद तत्कालीन डी0 एस 0 पी अनुसंधान का प्रभार पी0 डब्ल्यु-21 पार्थसार्थी को दी गई ओर विस्फोटक पदार्थ अधिनियम, 1908 की धारा-4 कानूनी गतिविधि (रोकथाम) अधिनियम 1967 की धारा 2(3) (1) (2) सह धारा 15 के अन्तर्गत मामला पंजीकृत हुआ। बाद में अनुसंधान के दौरान भा0 द 0 वि0 की धारा 120 बी0 सह टाडा एक्ट की धारा 3(3) तथा 4(1) तथा विस्फोटक पदार्थ अधिनियम, 1908 की धारा 5 के अन्तर्गत आरोप में परिवर्तन लाया गया।

4. 24.09.1990 को बम निरोधक दस्ता द्वारा घटनास्थल पर तलाशी लिया गया और जब्त सामान को फिंगर प्रिंट जाँच के लिए भेजा गया। मुख्य विस्फोटक नियंत्रणक से विस्फोटक पदार्थ की जाँच के लिए अनुरोध किया गया।

5. अनुसंधान के दौरान प्राप्त सूचना के आधार पर उपरोक्त अपराध से संबंधित साक्षियो का बयान दर्ज किया गया तथा पुलिस निरीक्षक सी0 बी0 सी0 आई 0 डी0 थन्जावोर द्वारा अब्दुल कलाम के घर में छापामारी किया तथा निरीक्षक के0 रमन को उसकी कस्टडी सौंपी गयी।

6. 10.05.1993 को पी0 डब्ल्यु0-26, एस 0 बी0 सी0 आई 0 डी0 के तत्कालीन पुलिस अधीक्षक को अपराध संख्या जी0 ओ 0/90 फोर्ट स्टेशन, चेन्नई को केस-फाईल प्राप्त हुआ तत्पश्चात् उसने अभियुक्त सतीश उर्फ वर्दीवेलु और अब्दुल कलाम की रिमान्ड अवधी बढाने हेतू दिनांक 04.06.1993 तथा 14.07.1993 को आवेदन दिया। उसने अब्दुल कलाम तथा वर्दीवेलु पर अभियोजन चलाने की अनुमति हेतू आवेदन सक्षम पदाधिकारी के समक्ष दिया। अभियुक्त चन्द्रन का बयान प्राप्त होने के पश्चात् उसने 02.09.1993 के चन्द्रन के विरूद्ध ताडा अधिनियम के तहत अभियोजन चलाने की अनुमति प्राप्त किया।

7. अनुसंधान पूर्ण कर पुलिस ने 03.09.1993 को अभियुक्त संख्या 01 से 14 तथा अन्य अज्ञात के विरूद्ध धारा 120बी0 सहपठित टाडा अधिनियम की धारा-3(3), (4)(1) विस्फोटक पदार्थ अधिनियम की धारा-05 तथा आर्म्स एक्ट की धारा 25(1)(B) सहपठित धारा-03, धारा-07 सहपठित धारा-35 (1)(A), के अन्तर्गत आरोप पत्र दाखिल किया गया। तत्पश्चात् विशेष न्यायालय द्वारा इस मामले में साक्षियों का साक्ष्य दर्ज किया गया ।

8. अभियोजन का मामला आगे यह था कि 24.05.2007 को अभियोजन साक्षी पी0 डब्ल्यु0-28, पुलिस अधीक्षक अशोक कुमार 'क्यू' 'ब्रांच' सी0 आई 0 डी0 हेड क्वार्टर, चेन्नई को अपीलार्थी का मन्नारकुडी थाना अपराध संख्या 954/1994 में गिरफ्तारी के संदर्भ में डी0 एस 0 पी0 'क्यू' 'ब्रांच' थंजवोर द्वारा जानकारी मिली। चूँकि अपीलार्थी इस मामले से संबंधित था इसलिए अनुसंधानकर्ता को आवश्यक कदम लेने के लिए सूचित किया गया। तद्नुसार पी0 डब्ल्यु0 संख्या-26 ने अपीलार्थी का दिनांक 25.07.2007 ने 27.07.2007 तक की पुलिस कस्टडी के लिए कार्यवाई की गई। पुलिस कस्टडी के दौरान अपीलार्थी ने स्वीकारोक्ति बयान देने की इच्छा जाहीर की तब उसे पी0 डब्ल्यु0-28 आरक्षी अधीक्षक के समक्ष 26.07.2007 को पी0 डब्ल्यु0-27 द्वारा एक आपेक्षिका प्रदर्श-पी0-55 के साथ प्रस्तुत किया गया। 27.07.2007 को पी0 डब्ल्यु0-28 द्वारा टाडा एक्ट की धारा 15 के तहत औपचारिकताओं का पालन करते हुए अभियुक्त का स्वीकारोक्ति बयान (प्रदर्श-पी0-56 तथा पी0-57) दर्ज किया गया। पी0 डब्ल्यु0-28 ने उपरोक्त प्रावधान के तहत एक अनुलग्नक बनाया और अपीलार्थी को न्यायालय के समक्ष प्रस्तुत किये जाने हेतू डी0 एस 0 पी0 को सुपुर्द किया गया। 27.07.2007 को सभी प्रक्रियाएं सील कभर में मुख्य मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट के पास विशेष दूत के माध्यम से भेजा गया।

9. उसके बाद अपीलार्थी के विरूद्ध आरोप का गठन कर उसे सुनाया और समझाया गया। यद्यपि प्रश्न किये जाने के दौरान अपीलार्थी ने आरोप से इंकार किया। अभियेाजन ने इस मामले में आरोप को सबित करने के लिए कुल 28 साक्षियों का परीक्षण किया गया है। अपीलार्थी का धारा 313 द 0 प्र 0 स 0 के तहत बयान दर्ज किया गया। अपीलार्थी ने बचाव साक्षी-1 के रूप में परीक्षण हेतू अनुमति दी गई। उसने प्रदर्श, डी0 ब्ल्यु0-01 से 07 तक दाखिल किया। नामित न्यायालय ने अपीलार्थी को दोषी करार दिया।

10. अपीलार्थी के विद्वान अधिवक्ता श्री एस 0 नागामुयु का कथन है कि नामित न्यायालय ने स्वीकारोक्ति बयान (प्रदर्श-पी0.27) पर विश्वास करते हुए अपीलार्थी को दोष सिद्ध किया है। पी0 डब्ल्यु-28, जिसने कथित स्वीकारोक्ति को दर्ज किया है उसने करतार सिंह बनाम पंजाब

राज्य[1] में दिये गये दिशा-निर्देश का बारीकी से अनुपालन नही किया है। स्वीकारोक्ति बयान मुक्त वातावरण में दर्ज नही किया गया, स्वीकारोक्ति दर्ज करने हेतु उसके अन्ततः दिये नियमों का अनुसरण नही किया गया है। भी कहा गया कि चूँकि स्वीकारोक्त बयान स्वेच्छा से नही दिया गया था इसिलए यह साक्ष्य के रूप में ग्राह्य नही है। इस संदर्भ में उन्होने मौखिक साक्ष्य की ओर ध्याान आकृष्ट कराया। आगे यह भी कहा गया कि अभियुक्त बाद में स्वीकारोक्ति से मुकर गया। इसलिएए यद्यपि स्वीकारोक्ति साक्ष्य ग्राह्य है परन्तु यह एक कमजोर साक्ष्य है तथा किसी अन्य स्वतंत्र साक्ष्य द्वारा पुष्टि के अभाव में दोषसिद्ध का एममात्र आधार नही हो सकता है। यह भी कहा गया कि सह अभियुक्त की स्वीकारोक्ति बयान (प्रदर्श-पी0.26 तथा पी0.27) साक्ष्य में ग्राह्य नही है क्योंकि अपीलार्थी के साथ उसका संयुक्त विचारण नही किया गया। सह-अभियुक्त का स्वीकारोक्ति ठोस साक्ष्य नही है। टाडा अधिनियम की धारा 15 (1) में वर्ष 1993 में हुए संशोधन वास्तव में साक्ष्य अधिनियम की धारा 30 में प्रावधान का परिपूरक है, जो संयुक्त विचारण का होना अनिवार्य बताता है। इसलिए नामित न्यायालय द्वारा अपीलार्थी का दोषसिद्धि कानूनी रूप से अपोषणीय है।

11. दूसरी तरफ उत्तरवादी की ओर से हाजिर विद्वान अतिरिक्त महाधिवक्ता श्री जयंत मुथ्थु राज ने नामित न्यायालय ने विवादित निर्णय का समर्थन किया।

12. हमने विद्वान वरीय अधिवकत द्वारा प्रस्तुत दलीलों का तथा अभिलेख पर उपलब्ध सामग्रियो पर सावधानीपूर्वक विचार किया।

13. नामित न्यायालय ने अपीलार्थी का स्वीकारोक्ति दिनांक 27.02.2007 (प्रदर्श.पी0.57) तथा अन्य दो सह अभियुक्तो का स्वीकारोक्ति बयान (प्रदर्श.पी0.26 तथा पी0.27) के आधार पर दोषी करार दिया है।

14. इसलिए पहला विचारणीय प्रशन यह है कि क्या अपीलार्थी ने स्वेच्छापूर्वक तथा सच्चाईपूर्वक स्वीकारोक्ति ब्यान (प्रदर्श.पी0.57) दिया है या नही।

15. स्वीकारोक्ति बयान से संबंधित कानून साक्ष्य अधिनियम की धारा 24 से 30 में सन्निहित है। स्वीकारोक्ति अपाराधिक आरोप को स्वीकार करने की एक अभिस्वीकृति है। इस संदर्भ में प्रिवी काउन्सिल द्वारा पकला नरायण स्वामी बनाम एम्परर[2] में पारित निर्णय में टिप्पणी पर ध्यान दिया जाना प्रासंगिक है। जो इस प्रकार है।

'' .....स्वीकारोक्ति में या तो आरोप के संदर्भ में स्वीकृति होना चाहिए या कम से कम उन सभी तथ्यों को स्वीकार करना चाहिए जो अपराध का गठन करते हैं। एक गंभीर रूप से दोषपूर्ण तथ्य की स्वीकृति यहाँ तक कि निर्णायक दोषपूर्ण तथ्य की स्वीकृति अपने आप में स्वीकारोक्ति नही है।''

16. यह स्थापित नियम है कि स्वीकारोक्ति जो संदेह से परे नही है, वह साक्ष्य के रूप में ग्राह्य नही है। स्वीकारोक्ति जो प्रलोभन, भय या वादा के आधार पर प्राप्त हो स्वैच्छिक स्वीकारोक्ति नही है। स्वीकारोक्ति स्वैच्छिक है अन्यथा नही यह एक तथ्य का प्रश्न है। राज्य (एन0सी0टी0 दिल्ली) बनाम नवजोत संधू[3] के मामले में न्यायालय ने इस पहलू पर विस्तार से निम्न रूप से विचार किया है:-

"29. स्वीकारोक्ति को अत्यधिक विश्वसनीय माना जाता है क्योंकि कोई भी तर्कसंगत व्यक्ति अपने हित के विरूद्ध स्वीकृति नही करेगा, जब तक उसकी अंतरआत्मा उसे सत्य कहने के लिए प्रेरित न करे। जान बूझकर स्वेच्छा से अपने दोष की संस्वीकृति यदि स्पष्ट रूप से साबित हो तो कानूनन यह एक सर्वाधिक प्रभावी सबूत है। (साक्ष्य के कानून पर टेलर का ग्रंथ, खण्ड-01) फिर भी स्वीकारोक्ति बयान पर विश्वास करने से पूर्व न्यायालय को स्वयं संतुष्ट होना चाहिए कि यह स्वेच्छा से स्वतंत्रतापूर्वक किया गया हो। आशा या लाभ, पुरस्कार या प्रतिरक्षा के वादे या बल द्वारा या हिंसा या हिंसा की धमकी से प्रेरित भय द्वारा प्राप्त स्वीकारोक्ति, स्वीकारोक्ति करने वाले के खिलाफ सबूत नही हो सकता है। स्वीकारोक्ति की प्रकृति और उसके परिणाम की पूरी जानकारी के साथ की जानी चाहिए। यदि न्यायालय द्वारा किसी भी युक्तियुक्त संदेह पर विचार करते हुए यह पाया जाता है कि ये तथ्य संतोषप्रद नही है तो न्यायालय को स्वीकारोक्ति पर विचार करने से बचना चाहिए। इसी तरह स्वीकारोक्ति दर्ज करने वाला पदाधिकारी भी, चाहे वह मजिस्ट्रेट हो या कोई अन्य वैधानिक पदाधिकारी विचारण पूर्व चरण में इस मुद्दे पर स्वयं को आश्वस्त करना चाहिए की अभियुक्त अधिकारिक व्यक्तियो द्वारा प्रेरित लाभ या पुरस्कार, भय, दबाव या किसी भी आशा से मुक्त वातावरण में स्वीकारोक्ति देने के लिए आगे आया है। पुलिस अभिरक्षा में आरोपी के रहते हुए भय, दहशत, चिन्ता और निराशा की स्थिति में होने की कठोर वास्तविकता को पहचानते हुए साक्ष्य अधिनियम के तहत पुलिस अधिकारी के सामने किया गया स्वीकारोक्ति बयान की स्वीकार्यता को बाहर कर दिया गया है।

17. टाडा अधिनियम की धारा 15(1) इस अधिनियम के तहत अपराध से आरोपित अभियुक्त का स्वीकारोक्ति दर्ज करने संबंधित स्वनिहित योजना है। विधि का यह प्रावधान साक्ष्य

अधिनियम की धारा 25-30 से बाहर रखा है। टाडा एक्ट की धारा 15 साक्ष्य अधिनियम तथा द०प्र० संहिता से अलग है। करतार सिंह के मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ ने उक्त प्रावधान की वैधता को बरकरार रखते हुए स्वीकारोक्ति दर्ज करते समय पालन करने के लिए कुछ दिशा निर्देश जारी किए है। ये दिशा निर्देश यह सुनिश्चित करने के लिए जारी किये गये है कि पुलिस पदाधिकारी जो पुलिस अधीक्षक के नीचे के रैंक का न हो, द्वारा अभियोग पूर्व पूछताछ में प्राप्त स्वीकारोक्ति किसी भी दोष से दूषित न हो बल्कि अच्छी तरह से मान्यता प्राप्त और स्वीकृत सौंदर्य सिद्धांतों और मौलिक निष्पक्षता के साथ सख्ती से अनुरूप हो ये दिशा-निर्देश है:-

1. स्वतंत्र वातावरण में स्वीकारोक्ति, करने वाले की भाषा में, उसके कहे अनुसार दर्ज किया जाना चाहिए।

2. जिस व्यक्ति का अधिनियम की धारा 15 (1) के अन्तर्गत स्वीकारोक्ति दर्ज की गयी हो, उसे नियम 15 (5) के अन्तर्गत लिखित था यांत्रिक उपकरण में दर्ज मूल स्वीकारोक्ति बयान को बिना अनुचित देरी के मुख्य मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट या मुख्य न्यायिक दण्डाधिकारी के समक्ष पेश किया जाना चाहिए।

3. मुख्य मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट या मुख्य न्यायिक दण्डाधिकारी जिसके समक्ष अभियुक्त को प्रस्तुत किया जाता है, उसे उसका बयान यदि देना चाहे तो सावधानी पूर्वक दर्ज करना चाहिए तथा उसपर बयानकर्ता का हस्ताक्षर लेना चाहिए। यदि वह किसी प्रकार की यातना की शिकायत करे तो चिकित्सा पदाधिकारी, जो सहायक चिकित्सा पदाधिकारी से कम रैंक का न हो, द्वारा चिकित्सीय जाँच करायी जानी चाहिए।

4. दण्ड प्रक्रिया संहिता में अन्यथा निहित होने के बावजूद, मेट्रोपोलिटन महानगरों में पुलिस पदाधिकारी, जो सहायक पुलिस कमिश्नर से नीचे रैंक के न हो तथा अन्यत्र पुलिस उपाधीक्षक या समकक्ष रैंक के पुलिस अधिकारी 1987 की इस अधिनियम के अन्तर्गत अपराध का अनुसंधान करेंगे। अधिनियम के कठोर प्रावधानों के लिए यह आवश्यक है। भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 17 तथा अनैतिक देह-व्यापार रोकथाम अधिनियम की धारा 13 के अन्तर्गत विशिष्ट रैंक के पुलिस पदाधिकारी को अनुसंधान के लिए अधिकृत करता है।

5. पुलिस पदाधिकारी, यदि अभियोग पूर्व या विचारण पूवर्, पूछताछ के लिए न्यायिक अभिरक्षा से पुलिस अभिरक्षा की मांग करता है, तो उसे शपथपत्र देना होगा न केवल इस तरह की

अभिरक्षा के लिए बल्कि पुलिस अभिरक्षा की मांग में देरी हो तो उस बात का।

6. यदि पूछताछ के लिए लिया गया व्यक्ति इस वैधानिक चेतावनी के बाबजूद कि वह स्वीकारोक्ति देने के लिए बाध्य नही है तथा यदि वह बयान देता है तो उसके विरूद्ध साक्ष्य के रूप में प्रयोग किया जा सकता है, उसके चुप रहने का अधिकार, पुलिस अधिकारी को, प्रकरट का बयान बिना किसी बाध्यता के देने के उसके अधिकार का, सम्मान करना चाहिए।

18. जमील अहमद बनाम् राजस्थान राज्य 4 के मामले में इस न्यायालय ने निर्णय दिया है कि जब ताडा एक्ट के तहत आरोपित अभियुक्त स्वेच्छा से स्वीकारोक्ति बयान देना चाहता है और यदि ऐसा बयान देता है जो पुलिस अधीक्षक से निम्न का अधिकारी द्वारा दर्ज नही है, साक्ष्य में ग्रारह्य है। इस मामले में दर्ज निष्कर्ष निम्न है:-

''35'' इस अपीलों में दिये गये कानूनी दलीलों के संबंध में निष्कर्षों को संक्षेपित करने पर हम पाते हैं कि

(i) यदि स्वीकारोक्ति टाडा एक्ट तथा उनके अन्तर्गत नियमों को पालन करते हुए उचित रूप से दर्ज की जाए और न्यायालय यह पाए कि सच्चाई तथा स्वेच्छा से स्वीकारोक्ति दी गयी है तो उक्त स्वीकारोक्तिकर्ता के विरूद्ध दोषसिद्धि का पर्याप्त आधार हो सकता है।

(ii) वैसी स्वीकारोक्ति को पुष्टि की आवश्यकता है या नही यह न्यायालय द्वारा उस मामले के तथ्य के आधार पर विचार किया जाना है।

(iii) एक सह अभियुक्त के विरूद्ध संस्वीकृति के इस्तेमाल के संदर्भ में यह निर्णित किया गया है कि सावधानी के लिए सामान्य पुष्टि की मांग होनी चाहिए परन्तु वैसे मामलों में जहाँ न्यायालय संतुष्ट है कि वैसी स्वीकारोक्ति है जो बिना पुष्टि के सह-अभियुक्त के दोषसिद्ध के लिए पर्याप्त आधार हो, वहाँ पुष्टि की आवश्यकता नही है। परन्तु यह सामान्य नियम जिसमें स्वीकारोक्ति का पुष्टि आवश्यक है यदि उसका इस्तेमाल सह अभियुक्त के विरूद्ध किया जाएए उसका अपवाद है।

(iv) दोनों ही मामलों में जब स्वीकारोक्ति का बयानकर्ता के विरूद्ध इस्तेमाल किया जाना है या किसी सह-अभियुक्त के विरूद्ध पुष्टि की प्रकृति सामान्य है जबतक कि न्यायालय इस नतीजे पर न पहुँचे कि पुष्टि किसी विशेष मामले के तथ्यों के कारण सारगर्भित तथ्यों पर होनी चाहिए। पुष्टि इस प्रकार होनी चाहिए कि एक बुद्धिमान व्यक्ति स्वीकारोक्ति में वर्णित तथ्यों को

अस्तित्व में होना विश्वास कर सके।

(v) टाडा नियमावली के नियम 15 का उपनियम (5) जो यह कहता है कि स्वीकारोक्ति बयान मुख्य मेट्रोपोलिटन मजिस्ट्रेट या मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट को भेजा जाय, जो नामित न्यायालय को भेजा जाएगा यह केवल निर्देशात्मक है अनिवार्य नही। यद्यपि न्यायालय जो नामित न्यायालय में सीधा प्रेषित स्वीकारोक्ति बयान पर विचार करे उसे उस मामले में तथ्यों पर इस बात से संतुष्ट होना होगा कि क्या स्वीकारोक्ति उसके वास्तविकता के बारे में कोई संदेह पैदा करता है।

19. इन सिद्धान्तों को ध्याम में रखते हुए यह विचार किया जाय कि अपीलार्थी का स्वीकारोक्ति बयान स्वैच्छिक तथा सत्य था या नही। अपीलार्थी बचाव साक्षी संख्या 1 है। उसने अपने साक्ष्य में कहा है कि 19.05.2007 को जब वह चेन्नई एयरपोर्ट से लौट रहा था वह गिरफ्तार हुआ । वह दो दिनों तक हिरासत में रखा गया और त्रिचि 'क्यू' ब्रांच में ले जाया गया जहाँ एक दिन के लिए रखा गया। इस समायावधी में पुलिस द्वारा उसे यातना दी गयी। 22.05.2007 को न्यायिक मजिस्ट्रेट, त्रिचि के समक्ष प्रस्तुत किया गया तथा 25.05.2007 तक के लिए रिमान्ड किया गया। पी0 डब्ल्यु0-27 ने अभियुक्त के पाँच दिनों की पुलिस रिमाण्ड हेतू आवेदन दिया तथा 25.07.2007 से 27.07.2007 तक के लिए पुलिस अभिरक्षा प्राप्त किया। 25.07.2007 को जब पुलिस गाड़ी में आरोपी बैठाया तथा 'क्यू' ब्रांच के निरीक्षक श्री राजेन्द्रन ने उसे कहा है कि उसे कुछ कागजात पर हस्ताक्षर करना चाहिए अन्यथा पुलिस अभिरक्षा में उसे मार दिया जाएगा। जब उसे उसी दिन नामित न्यायालय के समक्ष लाया गया तो उसने न्यायालय को यह बात बतायी और एक आवेदन (Ex-D-1) इस आशय का दिया कि उसको पुलिस द्वारा यातना दी गई है और उसका कथित घटना से कोई लेना-देना नही है। जब स्वीकारोक्ति ब्यान दर्ज होने के बाद उसे पुनः नामित न्यायालय के समक्ष लाया गया तो उसने एक आवेदन(प्रदर्श-डी-2) दिया कि उसने कोई दोषयुक्त बयान पी0 डब्ल्यु0-28 के समक्ष नही दिया है।

20. दिनांक 26.07.2007 को पी0 डब्ल्यु0-29 ने अपीलार्थी पी0 डब्ल्यु0-28 के समक्ष प्रस्तुत किया। पी0 डब्ल्यु0-28 ने अपने प्रतिपरीक्षण के दौरान यह कहा कि दिनांक 26.07.2007 को प्रस्तुती से पूर्व अभियुक्त पुलिस अभिरक्षा में था। दिनांक 26.07.2007 यद्यपि यह दर्ज किया गया है कई प्रश्न अभियुक्त से किये गये और उसने उत्तर दिया, परन्तु अभिलेख पर कुछ भी ऐसा नही है जिससे यह लगे कि टाडा अधिनियम की धारा 15 तथा टाडा नियमावली के नियम 15(3)के अनुसार अपीलार्थी अभियुक्त को चेतावनी दी गई है। अपने प्रति परीक्षण के

दौरान पी0 डब्ल्यु-28 ने कहा है कि उसने अभियुक्त को चेतावनी दी थी परन्तु यह किसी भी समकालिन दस्तावेज यथा प्रदर्श-56 दिनांक 26.06.2007 द्वारा पुष्ट नही था। पी0 डब्ल्यु-28 का साक्ष्य है कि उसने वही चेतावनी दी थी जो उसने 26.07.2007 को दिया था। अभिलेख पर कुछ भी नही है जो दर्शाये कि 26.07.2007 तथा 27.07.2002 को चेतावनी दी गयी। 27.07.2007 को पूछा गया प्रश्न अधिक महत्व रखता है। इस प्रश्न में पी0 डब्ल्यू-28 ने यह कहा है कि उसे बयान दर्ज कराने हेतू प्रस्तुत किया गया है। उसने यह नही कहा है कि उसे स्वीकारोक्ति दर्ज कराने हेतू प्रस्तुत किया गया है।

21. उत्तरदायी की ओर से विद्वान अतिरिक्त महाधिवक्ता द्वारा यह कहा गया कि प्रदर्श पी0-56 में लिखित फूट नोट यह दर्शाता है कि टाडा अधिनियम की धारा 15 तथा टाडा नियमावली की नियम 15 का अनुपालन किया गया है। यहाँ यह देखना आवश्यक है कि प्रावधान का अनुपालन कोरी औपचारिकता या महज तकनीकता नही है क्योंकि इस प्रावधान का उद्देश्य संविधान को अनुच्छेद-21 के अन्तर्गत निष्पक्ष विचारण को सुनिश्चित करना है। अभिलेख पर संपूर्ण प्रक्रिया से आसपास की विभिन्न परिस्थितियों तथा अभियुक्त से पूछे गये प्रश्न उत्तर पर विवेक का इस्तेमाल प्रतिबिंबित होना चाहिए। केवल प्रमाणपत्र से नियम का तकनीकी अनुपालन हो सकता है परन्तु बयान की स्वैच्छिकता साबित नही होगी। विधि में नियम का तकनीकी अनुपालन नही बल्कि स्वीकारोक्ति की स्वैच्छिकता को लेकर सही संतुष्टि आवश्यक है।

22. यहाँ यह भी कहना आवश्यक है कि पुलिस अधिकारी द्वारा दर्ज स्वीकारोक्ति निःसंदेह न्यायिक मिजस्ट्रेट द्वारा द0प्र0स0 की धारा 164 के तहत दर्ज बयान के समतुल्य है। इसलिए कथित संस्वीकृति एक ठोस साक्ष्य है। अतः जो भी सावधानियाँ न्यायिक मिजस्ट्रेट द्वारा लिया जाना होता है उसका पुलिस अधिकारी को भी अनुसरण करना चाहिए। यह स्थापित नियम है कि यदि मिजस्ट्रेट द्वारा द0प्र0स0 164 के तहत संतुष्टि शंकायुक्त हो तो संपूर्ण संस्वीकृति को खारिज किया जा सकता है।

23. इस मामले में यह स्पष्ट है कि पी0 डब्ल्यु0-28 द्वारा पूछे गये प्रश्न तथा अभियुक्त द्वारा दिये गये उत्तर तथा बयान देने का तरीका इस वाद का आधार है जिससे पता लगाया जा सके कि बयान स्वेच्छा से दिया गया या नही। यदि प्रमाणपत्र उपरोक्त किसी भी इनपूट द्वारा समर्थित नही है तो प्रमाणपत्र अस्वीकृत करने योग्य है। पुलिस पदाधिकारी अपनी कल्पना के आधार पर यह प्रमाणपत्र नही दे सकता बल्कि पूरी कार्रवाई में यह प्रतिबिम्बित होना चाहिए कि प्रमाणपत्र सही तरीके से तथ्यों के आधार दिया गया। इस मामले में बयान की स्वैच्छिकता

साबित करने के लिए अभिलेख पर कुछ भी उपलब्ध नही है। प्रदर्श-डी0-1 तथा डी0-2 और अन्य परिस्थितियों से पता चलता है कि अपीलार्थी स्वेच्छा से यह बयान नही दे सकता था। इसलिए अपीलार्थी का स्वीकारोक्ति अस्वीकार्य है।

24. विचारणार्थ द्वितीय प्रश्न यह है कि दोनों अन्य अभियुक्तों का स्वीकारोक्ति (प्रदर्श पी० 56 प्रदर्श पी० 57) साक्ष्य में ग्राह्य है या नही।

25. सह-अभियुक्त का संस्वीकृति पुलिस अधीक्षक पी0 डब्ल्यु-28 द्वारा अपराध संख्या 160/1990 में दर्ज किया गया है। अपीलार्थी फरार था इसलिए विचारण न्यायालय द्वारा उद्घोषणा पत्र आदेश निर्गत किया गया और उसके बाद अपीलार्थी का वाद पृथक किया गया। अपीलार्थी के विरूद्ध पृथक विचारण किया गया और नामित न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को दोषी करार देते हुए निर्णय पारित किया गया।

26. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान अतिरिक्त महाधिवक्ता का कथन है कि ताडा एक्ट की धारा 15 के लक्ष्य तथा उद्देश्य को विफल करने के लिए अपीलार्थी अपने भूल का फायदा नही उठा सकता है ।

27. अपीलार्थी की ओर से उपस्थित विद्वान वरीय अधिवक्ता का कथन है कि दोनों सह अभियुक्तों की संस्वीकृति साक्ष्य के रूप में ग्राह्य नही है क्योंकि अपीलार्थी का उन दोनों सह-अभियुक्तों के साथ संयुक्त विचारण नही किया गया है। इसलिए प्रदर्श-पी0-26 तथा पी0-27 साक्ष्य के रूप में ग्राह्य नही है।

28. भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 30 यह प्रावधान करती है कि सह अभियुक्त का स्वीकारोक्ति को ग्राह्यता के लिए संयुक्त विचारण होना अवश्यक है। यदि संयुक्त विचारण नही है तो सह अभियुक्त का स्वीकारोक्ती बयान साक्ष्य में ग्राह्य नही है और इसी कारणवश इसे अन्य सह अभियुक्त के विरूद्ध बतौर साक्ष्य प्रयोग नही किया जा सकता है। करतार सिंह के मामले में इस न्यायालय के संविधान पीठ ने

भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 30 तथा ताडा अधिनियम की धारा 15 के अन्तरप्रयोग पर विचारण करते हुए निर्णय दिया कि 1993 के संशोधन के बाद, सह अभियुक्त का स्वीकारोक्ति बयान भी ठोस साक्ष्य है बशर्ते संयुक्त विचारण हो।

29. राज्य बनाम नलिनी एवम् अन्य 5 के मामले में न्यायामूर्ति कादरी ने निर्णय दिया कि टाडा अधिनियम की धारा 15 के तहत अभियुक्त का संस्वीकृति वैसे सभी अभियुक्तों के विरूद्ध ग्राह्य है जिसका संयुक्त विचारण उस अभियुक्त के साथ किया गया। इस प्रकार यह निर्णय है:-

''688. टाडा अधिनियम की धारा 15 (1) के तहत दर्ज किए गए स्वीकारोक्ति के लिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 24 से 30 से बाहर रखते हुए इसमें एक स्व-निहित योजना शामिल की गई है ताकि किसी आरोपी के स्वीकारोक्ति को दर्ज किया जा सके और टाडा अधिनियम या उसके तहत बनाए गए नियमों या किसी अन्य कानून के तहत अपराधों के लिए सह-आरोपी, उकसाने वाले या साजिशकर्ता के साथ उसके मुकदमे में इसकी स्वीकार्यता दर्ज की जा सके, जिस पर संयुक्त रूप से उस अपराध के लिए मुकदमा चलाया जा सकता है जिसके साथ उस पर उसी मुकदमें में आरोप लगाया जाता है। इस प्रकार

689. टाडा अधिनियम की धारा 15(1) की स्थिति, मेरी दृष्टि में काफी मजबूत है, क्योकि यह कहता है, साक्ष्य की धारा 30 को लाने की आवश्यकता की कोई गुंजाईश नही है। धारा 15 की उपधारा (1) की भाषा में एक अभियुक्त के स्वीकारोक्ति बयान को उन सभी लोगों के खिलाफ स्वीकार्य सबूत बनाया गया है, जिनपर उसके साथ संयुक्त रूप से मुकदमा चलाया जाता है। इसलिए यह स्पष्ट है कि सह-अभियुक्त, दुष्पेत्क साजिशकर्ता के विरूद्ध एक ही मामले में आरोपित तथा विचारित अभियुक्त के स्वीकारोक्ति बयान पर विचार किया जा सकता है। इस दृष्टिकोण से टाडा अधिनियम की धारा 15(1) में साक्ष्य अधिनियम की धारा 30 को समावेश की कोई आवश्यकता नही है।

30. जमील अहमद के मामले में न्यायालय ने उपरोक्त स्थिति को इस प्रकार दोहराया है:-
"30.....इस प्रकार हमने पाया कि कि विधि में स्वीकृत सिद्धांत है कि ताडा अधिनियम कि धारा 15 कि अन्तर्गत दर्ज स्विकारोक्ति सह अभियुक्त के विरूद्ध की एक ठोस साक्ष्य है बशर्ते दोनों का संयुक्त विचारण किया गया है।

31. इस मामले में निःसंदेह अपीलार्थी फरार था, जिस कारण अन्य अभियुक्तगण के साथ उसका संयुक्त विचारण नही किया जा सका। टाडा अधिनियम 15 विशिष्ट प्रावधान करती है कि दर्ज स्वीकारोक्ति सह अभियुक्त के विचारण में ग्राह्य है यदि उस अभियुक्त के साथ उसने अपराध कारित किया तथा विचारण का सामना कर रहा है, जिसकी वह स्वीकारोक्ति बयान है। यदि किसी कारणवश संयुक्त विचारण नही किया गया तो उस अभियुक्त के विरूद्ध बतौर साक्ष्य इस्तेमाल नही किया जा सकता यद्यपि विचारण उसी मामले में बाद में किया गया है। आगे हमारा मंतव्य है कि चूँकि अन्य दो अभियुक्तों का विचारण पृथक किया गया, उनका

स्वीकारोक्ति बयान साक्ष्य में ग्राह्य लायक नही है तथा अपीलार्थी के विरूद्ध इसे साक्ष्य के रूप में प्रयोग नही किया जा सकता है। नामित न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को दोषी ठहराया जाना न्यायोचित नही है।

32. अनंता दीक्षित बनाम राज्य 6 के मामले में उड़ीसा उच्च न्यायालय ने साक्ष्य अधिनियम की धारा 30 के अन्तर्गत इसी तरह के मामले पर विचार किया है। इस मामले में अपीलार्थी फरार था। विचारणार्थ प्रश्न यह था कि पूर्व में विचारण का सामना किए अभियुक्त का स्वीकारोक्ति बयान अपीलार्थी के विरूद्ध ग्राह्य था या नही। न्यायालय ने निर्णय दिया कि वर्तमान अपीलार्थी के विरूद्ध सह-अभियुक्त का स्वीकारोक्ति साक्ष्य में ग्राह्य नही था। न्यायालय ने निर्णित किया कि:-

''7. विद्वान विचारण न्यायालय ने दर्ज किया है कि अभियुक्त नरेन्द्र बहेरा, जिसकी स्वीकारोक्ति पर न्यायालय ने विश्वास किया है, का विचारण पूर्व में हुआ, न कि अपीलार्थी और सह अभियुक्त बैना दास के साथ अभियुक्त का स्वीकारोक्ति के लिए न केवल उस अभियुक्त के विरूद्ध बल्कि उसी अपराध के लिए साथ में विचारण का सामना कर रहे सह अभियुक्त के विरूद्ध भी ग्राह्य है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 30 वैसे मामले में लागू होता है जिसमें स्वीकारोक्ति देने वाले अभियुक्त के साथ उस दूसरे अभियुक्त का विचारण हो जिसके विरूद्ध स्वीकारोक्ति का इस्तेमाल किया जाए। पूर्व में विचारण का सामना कर रहे अभियुक्त की स्वीकारोक्ति अग्राह्य है। इसलिए सह-अभियुक्त के स्वीकारोक्ति के साक्ष्य-मूल्य से भिन्न, नरेन्द्र बहेरा का स्वीकारोक्ति वर्तमान अपीलार्थी तथा सह-अभियुक्त बैना दास के विरूद्ध साक्ष्य अधिनियम की धारा 30 के तहत ग्राह्य नही था '' हमलोग उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण से पूरी तरह से सहमत हैं।

33. हमारे दृष्टिकोण में चूँकि दो अन्य अभियुक्तों का विचारण पृथक किया गया। उनकी स्वीकारोक्तियाँ (प्रदर्श पी.26 तथा पी.27) साक्ष्य में ग्राह्य नही है और अपलार्थी के विरूद्ध साक्ष्य के रूप में नही लिया जा सकता।

34. उपरोक्त चर्चाओं के मद्देनजर नामित न्यायालय द्वारा अपीलार्थी को दोषी ठहराना उचित नही था। नामित न्यायालय संख्या 2 चेन्नई के पीठासीन पदाधिकारी द्वारा कैलेन्डर केस नंबर-1/2007 में पारित निर्णय तथा आदेश दिनांक 04-12-2009 को अपास्त किया जाता है तथा अपीलार्थी अभियुक्त को उस अपराध के लिए बरी किया जाता है जिसके लिए उस पर मुकदमा चलाया गया था। इस न्यायालय के आदेश दिनांक 25-10-2010 द्वारा अपीलार्थी को जमानत

दी गयी थी। इसलिए उसे मुक्त करने का प्रश्न नही उठता है। अपीलार्थी द्वारा निस्पादित बंध-पत्र तथा प्रतिभू यदि कोई है तो उसे भी निरस्त किया जाता है।

1 1994(3) एस.सी.सी. 569
2. 1939 47 पी.सी.
3. (2005)11 एस.सी.सी.600
4. (2003)9 एस.सी.सी. 673
5. (1999)5 एस.सी.सी. 253
6. 1984 क्रि. एल.जे. 1126

सुलेखा झा